Golden Research Thoughts
Volume 2, Issue. 12, June. 2013
ISSN:-2231-5063
Available online at www.lbp.world

ORIGINAL ARTICLE

भारतीय महिलाएं : बदलता परिवेश

श्री देवेन्द्र
व्याख्याता –समाजशास्त्र , राजकीय महिला महाविद्यालय
सदुलशहर (जिला श्रीगंगानगर)

मुख्य भाब्द : स्त्रियों का एतिहासिक परिप्रेक्ष्य, दोयम सामाजिक व्यवहार , आर्थिक सामाजिक सहभागिता ,स्त्री की सामाजिक पहचान , आत्मनिर्भरता , पूर्ण स्वतंत्रता।

सारांश :

प्रस्तावना : भारत में महिलाओं की स्थिति सदैव एक समान नही रही है। इसमें युगानुरूप परिवर्तन होते रहे हैं। उनकी स्थिति में वैदिक युग से लेकर आधुनिक काल तक अनेक उतार–चढ़ाव आते रहे हैं तथा उनके अधिकारों में तदनरूप बदलाव भी होते रहे हैं। वैदिक युग में स्त्रियों की स्थिति सुदृढ़ थी, परिवार तथा समाज में उन्हे सम्मान प्राप्त था। उनको शिक्षा का अधिकार प्राप्त था। सम्पत्ति में उनको बराबरी का हक था। सभा व समितियों में से स्वतंत्रतापूर्वक भाग लेती थी हिन्दू जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में वह समान रूप से आदर और प्रतिष्ठित थीं। शिक्षा, धर्म, व्यक्तित्व और सामाजिक विकास में उसका महान योगदान था। संस्थानिक रूप से स्त्रियों की अवनति उत्तर वैदिककाल से शुरू हुई। उन पर अनेक प्रकार के निर्योग्यताओं का आरोपण कर दिया गया। उनके लिए निन्दनीय शब्दों का प्रयोग होने लगा। उनकी स्वतंत्रता और उन्मुक्तता पर अनेक प्रकार के अंकुश लगाये जाने लगे। मध्यकाल में इनकी स्थिति और भी दयनीय हो गयी। पर्दा प्रथा इस सीमा तक बढ़ गई कि स्त्रियों के लिए कठोर एकान्त नियम बना दिए गये। शिक्षण की सुविधा पूर्णरूपेण समाप्त हो गई।

नारी के सम्बन्ध में मनु का कथन ''पितारक्षति कौमारे.........न स्त्री स्वातंन्यम् अर्हति। वहीं पर उनका कथन ''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'', भी दृष्टव्य है वस्तुतः यह समस्या प्राचीनकाल से रही है। इसमें धर्म, संस्कृति साहित्य, परम्परा, रीतिरिवाज और शास्त्र को कारण माना गया है। भारतीय दृष्टि से इस पर विचार करने की की जरूरत है। पश्चिम की दृष्टि विचारणीय नहीं। भारतीय सन्दर्भो में समस्या के समाधान के लिए प्रयास हो तो अच्छे हुए हैं। भारतीय मनीषा समानाधिकार, समानता, प्रतियोगिता की बात नहीं करती वह सहयोगिता सहधर्मिती, सहचारिता की बात करती है। इसी से परस्पर सन्तुलन स्थापित हो सकता है।

वैदिक एवं उत्तर वैदिक काल में महिलाओं को गरिमामय स्थान प्राप्त था। उसे देवी, सहधर्मिणी अर्द्धांगिनी, सहचरी माना जाता था। स्मृतिकाल में भी ''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'' कहकर उसे सम्मानित स्थान प्रदान किया गया है। पौराणिक काल में शक्ति का स्वरूप मानकर उसकी आराधना की जाती रही है। किन्तु 11 वीं शताब्दी से 19 वीं शताब्दी के बीच भारत में महिलाओं की स्थिति दयनीय होती गई। एक तरह से यह महिलाओं के सम्मान, विकास, और सशक्तिकरण का अंधकार युग था। मुगल शासन, सामन्ती व्यवस्था, केन्द्रीय सत्ता का विनष्ट होना, विदेशी आक्रमण और शासकों की विलासितापूर्ण प्रवृत्ति ने महिलाओं को उपभोग की वस्तु बना दिया था और उसके कारण बाल विवाह,

पर्दा प्रथा, अशिक्षा आदि विभिन्न सामाजिक कुरीतियों का समाज में प्रवेश हुआ, जिसने महिलाओं की स्थिति को हीन बना दिया तथा उनके निजी व सामाजिक जीवन को कलुषित कर दिया।

धर्मशास्त्र का यह कथन नारी स्वतन्त्रता का अपहरण नहीं है अपितु नारी के निर्बाध रूप से स्वधर्म पालन कर सकने के लिए बाह्य आपत्तियों से उसकी रक्षा हेतु पुरूष समाज पर डाला गया उत्तरदायित्व है। इसलिए धर्मनिष्ठ पुरूष इसे भार न मानकर ,धर्मरूप में स्वीकार अपना कल्याणकारी कर्त्तव्य समझता है। पौराणिक युग में नारी वैदिक युग के दैवी पद से उतरकर सहधर्मिणी के स्थान पर आ गई थी। धार्मिक अनुष्ठानों और याज्ञिक कर्मो में उसकी स्थिति पुरूष के बराबर थी। कोई भी धार्मिक कार्य बिना पत्नी नहीं किया जाता था। श्रीरामचन्द्र ने अश्वमेध के समय सीता की हिरण्यमयी प्रतिमा बनाकर यज्ञ किया था। यद्यपि उस समय भी अरून्धती (महर्षि वशिष्ठ की पत्नी), लोपामुद्रा, महर्षि अगस्त्य की पत्नी),अनुसूया (महर्षि अत्रि की पत्नी) आदि नारियाँ दैवी रूप की प्रतिष्ठा के अनुरूप थी तथापि ये सभी अपने पतियों की सहधर्मिणी ही थीं।

मध्यकाल में विदेशियों के आगमन से स्त्रियों की स्थिति में जबर्दस्त गिरावट आयी। अशिक्षा और रूढ़ियाी जकड़ती गई,घर की चाहरी दीवारी में कैद होती गई और नारी एक अबला,रमणी और भोग्या बनकर रह गई। आर्य समाज आदि समाज–सेवी संस्थाओं ने नारी शिक्षा आदि के लिए प्रयास आरम्भ किये। उन्नीसवीं सदीं के पूर्वार्द्ध में भारत के कुछ समाजसेवियों जैसे राजाराम मोहन राय, दयानन्द सरस्वती, ईश्वरचन्द विद्यासागर तथा केशवचन्द्र सेन ने अत्याचारी सामाजिक व्यवस्था के विरूद्ध आवाज उठायी। इन्होंने तत्कालीन अंग्रेजी शासकों के समक्ष स्त्री पुरूष समानता, स्त्री शिक्षा, सती प्रथा पर रोक तथा बहु विवाह पर रोक की आवाज उठायी। इसी का परिणाम था सती प्रथा निषेध अधिनियम 1829, हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम 1856, बहु विवाह रोकने के लिये वेटिव मैरिज एक्ट 1891, लागू करवाया। इन सभी कानूनों का समाज पर दूरगामी परिणाम हुआ। आने वाले समय में स्त्री जागरूकता में वृद्धि हुई औेर नये नारी संगठनों का सूत्रपात हुआ जिनकी मुख्य मांग स्त्री शिक्षा, दहेज, बाल विवाह जैसी कुरीतियों पर रोक, महिला अधिकार, महिला शिक्षा का माँग की गई।

महिलाओं के पुनरोत्थान का काल ब्रिटिश काल से शुरू होता है। ब्रिटिश शासन की अवधि में हमारे समाज की सामाजिक व आर्थिक संरचनाओं में अनेक परिवर्तन किए गए। ब्रिटिश शासन के 200 वर्षों की अवधि में स्त्रियों के जीवन में प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष अनेक सुधार आये। औद्योगीकरण, शिक्षा का विस्तार, सामाजिक आन्दोलन व महिला संगठनों का उदय व सामाजिक विधानों ने स्त्रियों की दशा में बड़ी सीमा तक सुधार की ठोस शुरूआत की।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व तक स्त्रियों की निम्न दशा के प्रमुख कारण अशिक्षा, आर्थिक निर्भरता, धार्मिक निषेध, जाति बन्धन, स्त्री नेतृत्व का अभाव तथा पुरूषों का उनके प्रति अनुचित दृष्टिकोण आदि थे। मेटसन ने हिन्दू संस्कृति में स्त्रियों की एकान्तता तथा उनके निम्न स्तर के लिए पांच कारकों को उत्तरदायी ठहराया है, यह है– हिन्दू धर्म, जाति व्यवस्था, संयुक्त परिवार, इस्लामी शासन तथा ब्रिटिश उपनिवेशवाद। हिन्दूवाद के आदर्शों के अनुसार पुरूष स्त्रियों से श्रेष्ठ होते हैं और स्त्रियों व पुरूषों को भिन्न–भिन्न भूमिकाएं निभानी चाहिए। स्त्रियों से माता व गृहणी की भूमिकाओं की और पुरूषों से राजनीतिक व आर्थिक भूमिकाओं की आशा की जाती है।

उन्नीसवीं सदी के मध्यकाल से लेकर इक्कीसवीं सदी तक आते–आते पुनः महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ और महिलाओं ने शैक्षिक, राजनीतिक सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, प्रशासनिक, खेलकूद आदि विविध क्षेत्रों में उपलब्धियों के नए आयाम तय किये। आज महिलाएँ आत्मनिर्भर, स्वनिर्मित, आत्मविश्वासी हैं, जिसने पुरूष प्रधान चुनौतीपूर्ण क्षेत्रों में भी अपनी योग्यता प्रदर्शित की है। वह केवल शिक्षिका, नर्स, स्त्री रोग की डाक्टर न बनकर इंजीनियर, पायलट, वैज्ञानिक, तकनीशियन, सेना, पत्रकारिता जैसे नए क्षेत्रों को अपना रही है। राजनीति के क्षेत्रों में महिलाओं ने नए कीर्तिमान स्थापित किए हैं। देश के सर्वोच्च राष्ट्रपति पद पर श्रीमती प्रतिभा पाटिल, लोकसभा स्पीकर के पद पर मीरा कुमार, कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी, उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री मायावती, वसुन्धरा राजे, सुषमा स्वराज, जयललिता, ममता बनर्जी निर्मला सीतारमण आदि महिलाएँ राजनीति के क्षेत्र में शीर्ष पर हैं। सामाजिक क्षेत्र में भी मेधा पाटकर, श्रीमती किरण मजूमदार, इलाभट्ट, सुधा मूर्ति आदि महिलाएँ ख्यातिलब्ध हैं। खेल जगत में पी.टी. ऊषा, अंजू बाबी जार्ज, सानिया मिर्जा,कर्णम मल्लेश्वरी,मेरी कॉम आदि ने नए कीर्तिमान

स्थापित किये हैं। आई.पी.एस. किरण बेदी, अंतरिक्ष यात्री सुनीता विलियम्स आदि ने उच्च शिक्षा प्राप्त करके विविध क्षेत्रों में अपने बुद्धि कौशल का परिचय दिया है।

21 वीं सदी के प्रारम्भ में परम्परावादी सोच बदल रही है। स्त्री स्वातय में अर्थशास्त्र का योगदान अद्भुत है। स्त्रियां धन कमाने लगीं हैं तो पुरूष की मानसिकता में भी परिवर्तन आया है। आर्थिक दृष्टि से नारी अर्थचक्र के केन्द्र की ओर बढ़ रही है। विज्ञापन की दुनियां में नारियां बहुत आगे हैं। बहुत कम ही ऐसे विज्ञापन होंगे जिनमें नारी न हो लेकिन विज्ञापन में अश्लीलता चिन्तन का विषय है। इससे समाज में विकृतियाँ भी बढ़ रही हैं। अर्थशास्त्र ने समाजशास्त्र को बौना बना दिया है।

आज की नारी राजनीति, कारोबार, कला तथा नौकरियों में पहुचकर नये आयाम गढ़ रही हैं। भूमण्डलीकृत दुनियां में भारत और यहां की नारी ने अपनी एक नितांत सम्मानजनक जगह कायम कर ली है।फौज, राजनीति, खेल, पायलट तथा उद्यमी सभी क्षेत्रों में जहां वर्षों पहले तक महिलाओं के होने की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। वहां सिर्फ नारी स्वयं को स्थापित ही नहीं कर पायी है बल्कि वहां सफल भी हो रही हैं।

यदि आपको विकास करना है तो महिलाओं का उत्थान करना होगा । महिलाओं का विकास होने पर समाज का विकास स्वतः हो जायेगा।—जवाहर लाल नेहरू

महिलाओं को शिक्षा देने तथा सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिये जो सुधार आन्दोलन प्रारम्भ हुआ उससे समाज में एक नयी जागरूकता उत्पन्न हुई है। बाल—विवाह, भ्रूण—हत्या पर सरकार द्वारा रोक लगाने का अथक प्रयास हुआ है । शैक्षणिक गतिशीलता से पारिवारिक जीवन में परिवर्तन हुआ है । गाेधीजी ने कहा था कि एक लड़की की शिक्षा एक लड़के की शिक्षा की उपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है क्यों लड़के को शिक्षित करने पर वह अकेला शिक्षित होता है किन्तु एक लड़की की शिक्षा से पूरा परिवार शिक्षित हो जाता है । शिक्षा ही वह कुंजी है जो जीवन के वह सभी द्वार खोल देती है जो कि आवश्यक रूप से सामाजिक है । शिक्षित महिलाओं को राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सक्रिय होने में बहुत मदद मिली । महिलाएँ अपनी स्थिति व अपने अधिकारों के विषय में सचेत होने लगी । शिक्षा ने उन्हें आर्थिक, राजनैतिक व सामाजिक न्याय तथा पुरूष के साथ समानता के अधिकारों की मांग करने को प्रेरित किया ।

संवैधानिक अधिकारों में विभिन्न कानूनों के द्वारा महिलाओं को पुरूषों के समान अधिकार मिलने से उनकी स्थिति में परिवर्तन हुआ । महिलाओं की विवाह विच्छेद परिवार की सम्पत्ति में पुरूषों के समान अधिकार दिये गये । दहेज पर कानूनी प्रतिबन्ध लगा तथा उन व्यक्तियों के लिये कठोर दण्ड की व्यवस्था की गयी जो दहेज की मांग को लेकर महिलाओं का उत्पीड़न करते हैं । अब सरकार लिव इन पर विचार कर रही है । संयुक्त परिवारों के विघटन होने से जैसे—जैसे एकांकी परिवार की संख्या बढ़ी इनमें न केवल महिलाओं को सम्मानित स्थान मिलने लगा बल्कि लड़कियों की शिक्षा को भी एक प्रमुख आवश्यकता के रूप में देखा जाने लगा । वातावरण अधिक समताकारी होने से महिलाओं को अपने वयक्तित्व का विकास करने के अवसर मिलने लगे ।

महिला शिक्षा समाज का आधार है । समाज द्वारा पुरूष को शिक्षित करने का लाभ केवल मात्र पुरूष को होता है जबकि महिला शिक्षा का स्पष्ट लाभ परिवार, समाज एवं सम्पूर्ण राष्ट्र को होता है । चूंकि महिला ही माता के रूप में बच्चे की प्रथम अध्यापक बनती है । महिला शिक्षा एवं संस्कृति को सभी क्षेत्रों में पर्याप्त समर्थन मिला। यद्यपि कुछ समय तक महिला शिक्षा के समर्थक कम किन्तु आज समय एवं परिस्थितियों ने महिला शिक्षा को अनिवार्य बना दिया है ।

स्त्री और मुक्ति आज भी नदी के दो किनारे की तरह है जो कभी मिल नहीं पाती सतही तौर पर देखा जाये तो लगता है कि भारत ही नहीं, विश्व पटल पर अपनी पहचान बनाती हुई स्त्रियों ने अपनी पुरानी मान्यतायें बदली हैं। आज की स्त्री की अस्मिता का प्रश्न मुखर होता जा रहा है। अपने अस्तित्व को बचाये रखने के लिये संघर्ष करती हुई स्त्रियों ने लम्बा रास्ता तय कर लिया है, परन्तु आज भी एक बड़ा हिस्सा सदियों से सामाजिक अन्याय का शिकार है। ‘‘जब—जब स्त्री अपनी उपस्थिति दर्ज कराना चाहती है तब तब जाने कितने रीति—रिवाजों, परम्पराओं पौराणिक आख्यानों की दुहाई देकर उसे गुमनाम जीवन जीने पर विवश कर दिया जाता है।‘‘

समाज वैज्ञानिक अनुसंधान का एक अनिवार्य अंग अध्ययन की जाने वाली ईकाई से संबंधित संकलित तथ्यों को उसके वृहद परिस्थितियों में आकलन करना हैं, विश्लेषण करना हैं, विवेचना करना हैं। सामाजिक घटना का अध्ययन करते हुए समाज वैज्ञानिक उन घटनाओं का केवल तथ्यात्मक अवलोकन ही नहीं करता वरन् उन घटनाओं का अन्तःसंबंध, सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक परिवेश, आर्थिक व्यवसायिक संरचना, मनोसामाजिक विशेषताओं इत्यादि से ज्ञात करने का प्रयत्न भी करता हैं। वस्तुतः सामाजिक अनुसंधान की एक मौलिक मान्यता यह हैं कि सामाजिक घटनाएं अन्तःसंबंधित होती हैं और विभिन्न प्रकार के कारकों की पारस्परिक अन्तक्रियाओं के परिणामस्वरूप सामाजिक घटनाएं उत्पन्न होती हैं अतः किसी भी अध्ययन की समस्या का विश्लेषण करते हुए उसके विशिष्ट पृष्ठभूमि अथवा सामाजिक सांस्कृतिक परिवेश में अध्ययन किया जाना चाहिए।

मानव के व्यक्तित्व के निर्माण में सामाजिक–आर्थिक पहलूओं का महत्वपूर्ण योगदान रहता हैं। समाज में व्याप्त प्रतिमानों और मूल्यों का आंतरीकरण मानव करता हैं और अपने व्यक्तित्व को प्राप्त करता हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में प्रमुख समाजशास्त्री व मानवतावादी लेखक डेविड रीजमैन ने तीन प्रकार के व्यक्तियों का समावेश किया हैं।

1. परम्परा निर्देशित 2. बाह्य निर्देशित 3.अन्तःनिर्देशित

सामाजिक पृष्ठभूमि सामान्य रूप से सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक तथा भौगोलिक स्थिति की द्योतक हैं। भारतीय संदर्भ में जाति, वर्ग, सजातीयता, समूह, ग्रामीण नगरीय भिन्नता, पारिवारिक संरचना, शैक्षणिक स्तर, आय, पडौस आदि दस ऐसे महत्वपूर्ण कारक हैं जो सामाजिक पृष्ठभूमि को प्रभावित करते हैं। इन सभी कारकों में प्रदत्त और अर्जित प्रस्थितियों का सम्मिश्रण हैं। अतः भारत में आधुनिकता और वैश्वीकरण की प्रक्रिया को नकारा नहीं जा सकता साथ में भारतीय समाज के परम्परागत आधार को भी नकारा नहीं जा सकता हैं जो सामाजिक संस्तरण में प्रदत्त प्रस्थिति के निर्धारक होते हैं वहीं समकालीन परिप्रेक्ष्य में सामाजिक संस्तरण में सामाजिक गतिशीलता के कारण अर्जित प्रस्थितियों का महत्व अधिक हो गया हैं। प्रस्तुत शोध में श्रीगंगानगर जिले की श्रीगंगानगर तहसील में निम्न वर्ग, मध्यम वर्ग एवं उच्च वर्ग के विभिन्न व्यक्तियों से महिला मुद्दों से संबंधित आंकड़े एकत्रित किये गये।

सारणी – 1
संतान की प्राथमिकता के आधार पर वर्गीकरण

क्र.स.	**उत्तर**	**संख्या**				
		निम्न वर्ग	मध्यम वर्ग	उच्च वर्ग	योग	प्रतिशत
1.	पुत्र	79	76	58	213	71.00
2.	पुत्री	21	24	42	87	29.00
3.	योग	100	100	100	300	100.00

उपरोक्त सारणी के अनुसार निम्न वर्ग के लोगों में पुत्र की चाह अधिक पाई जाती हैं। निम्न वर्ग के 79 लोगों के अनुसार अनुसार उनकी पहली संतान पुत्र को प्राथमिकता दी तथा 21 लोगों ने पुत्री को प्राथमिकता दी। इसी प्रकार मध्यम वर्ग के लोग भी प्रथम संतान में पुत्र को ही प्राथमिकता देते हैं। मध्यम वर्ग के 76 लोगों ने माना की उनकी प्रथम संतान में प्राथमिकता पुत्र को देते हैं। 24 मध्यम वर्ग के लोगों ने पुत्री को प्राथमिकता दी।

सारणी से यह भी ज्ञात होता हैं कि उच्च वर्ग के लोगों में पुत्र की चाह कम पाई जाती हैं। 58 उच्च वर्ग के लोग यह चाहते हैं कि उनकी पहली संतान पुत्र हो तथा 42 लोग यह चाहते हैं कि उनकी पहली संतान पुत्री हो।

इस प्रकार सारणी से ज्ञात होता हैं कि उच्च वर्ग के लोगों में लैंगिक भेदभाव कम पाया जाता हैं तथा निम्न तथा मध्यम वर्ग के लोगों में भेदभाव अधिक पाया जाता हैं। संपूर्ण उत्तरदाताओं का प्रतिशत निकालने पर ज्ञात होता हैं कि 71.00 प्रतिशत उत्तरदाता अपनी पहली संतान में पुत्र को ही प्राथमिकता देते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट होता हैं कि वर्तमान आधुनिक समाज में भी लैंगिक भेदभाव पाया जाता हैं तथा शिक्षित लोग भी लडका और लडकी में भेद करते हैं।

सारणी – 2

महिला का समाजीकरण सामाजिक मान्यताओं से प्रभावितता के आधार पर वर्गीकरण

क्र.स.	उत्तर	संख्या				
		निम्न वर्ग	मध्यम वर्ग	उच्च वर्ग	योग	प्रतिशत
1.	हाँ	87	100	100	287	95.67
2.	नहीं	13	00	00	13	4.33
3.	योग	100	100	100	300	100.00

उपरोक्त सारणी के तथ्यों के विश्लेषण से यह जानकारी प्राप्त होती है कि अधिकांशतः सभी लोगों का मानना है कि सामाजिक मान्यताओं का प्रभाव महिला के समाजीकरण पर भी पडता है। जैसा कि सारणी से पता चलता हैं कि 87 प्रतिशत निम्न वर्ग के लोगों ने तथा मध्यम तथा उच्च वर्ग के सभी लोगों ने यह माना हैं कि सामाजिक मान्यताओं का प्रभाव महिला के समाजीकरण पर पडता है। इस प्रकार 95.67 प्रतिशत लोग का ऐसा मानना है कि महिला समाजीकरण पर सामाजिक मान्यताए प्रभाव डालती है।

सारणी – 3

महिला उपेक्षा को सामाजिक स्वीकृति है सहमतता आधार पर वर्गीकरण

क्र.स.	उत्तर	संख्या				
		निम्न वर्ग	मध्यम वर्ग	उच्च वर्ग	योग	प्रतिशत
1.	हाँ	88	31	79	198	66.00
2.	नहीं	10	55	10	75	25.00
3.	कोई उत्तर नहीं	02	14	11	27	9.00
4.	योग	100	100	100	300	100.00

उपरोक्त सारणी से पता चलता है कि उच्च तथा निम्न वर्ग के लोगों का मानना हैं कि महिलाओं की उपेक्षा को सामाजिक स्वीकृति मिली हुई है। 66 प्रतिशत लोगों का यही मानना हैं कि महिलाओं की उपेक्षा को सामाजिक स्वीकृति मिली हुई है। वहीं 25 प्रतिशत लोगों का ऐसा नहीं मानना है।

निष्कर्ष :–

प्रस्तुत अध्ययन में महिला से भेदभाव की स्थिति के स्तर का पता लगाया गया हैं जिसमें निम्न निष्कर्ष निकलते है।

समाज में बालिकाओं के साथ आज भी भेदभाव कायम है। परिवार में आज भी अधिकांशतः पुत्र जन्म को ही प्राथमिकता दी जाती है तथा पुत्री जन्मोंत्सव नहीं मनाया जाता है। इसके पीछे यह कारण निकल कर आए हैं कि आज भी पुत्री को परायाधन माना जाता है। परम्परागत रूप से यदि पुत्री जन्म नहीं मनाया जाता हैं तो वह आज भी कायम है।

निष्कर्ष निकलता है कि पुत्र की इच्छा, वंश परम्परा और कन्या की सुरक्षा की भावना व स्वयं के सम्मान के कारण आज भी महिलाओं को समाज में उचित स्थान नहीं मिल पाता है।

यह भी निष्कर्ष निकलता हैं कि बाल विवाह, दहेज प्रथा, बालिकाओं को लेकर सामाजिक कारण, बालिकाओं पर परिवार की इज्जत का बोझ उनकी सुरक्षा, असमान समाजीकरण भी महिलाओं से भेदभाव का कारण आज भी बने हुए है।

यह भी निष्कर्ष निकलता हैं कि कानून और संस्थाओं ने महिलाओं से भेदभाव रोकने की काफी कोशिश की है लेकिन लोगों में उतनी जागरूकता नहीं आ पाई है। आज देखने में आया है कि महिलाओं ने स्वयं के अनुभव के आधार पर, अपनी मेहनत और आत्मविश्वास के आधार पर अपने लिए नई मंजिलें, नये रास्तों का निर्माण किया है। क्या मात्र इस आधार पर उस सफलता के पीछे क्षणांश भी किसी पुरुष के हाथ होने की सम्भावना को नकार दिया जायेगा? यदि नहीं तो फिर समस्या कहाँ है? मैं कौन हूँ का प्रश्न अभी भी उत्तर की आस में क्यों खड़ा है? जवाब हमारे सभी के अन्दर ही है पर उसको सामने लाने में हम घबराते भी दिखते हैं। स्त्री को एक देह से अलग एक स्त्री के रूप में देखने की आदत को डालना होगा। स्त्री के कपड़ों के भीतर से नग्नता को खींच–खींच कर बाहर लाने की परम्परा से निजात पानी होगी। कोड ऑफ कंडक्ट किसी भी समाज में व्यवस्था के संचालन में तो सहयोगी हो सकते हैं किन्तु इसके अपरिहार्य रूप से किसी भी व्यक्ति पर लागू किये जाने से इसके विरोध की सम्भावना उतनी ही प्रबल हो जाती है जितनी कि इसको लागू करवाने की। क्या बिकाऊ है और किसे बिकना है, अब इसका निर्धारण स्वयं बाजार करता है, हमें तो किसी को बिकने और किसी को जोर जबरदस्ती से बिकने के बीच में आकर खड़े होना है। किसी की मजबूरी किसी के लिए व्यवसाय न बने यह समाज को ध्यान देना होगा।

नग्नता और शालीनता के मध्य की बारीक रेखा समाज स्वयं बनाता और स्वयं बिगाड़ता है। एक नजर में उसका निर्धारक पुरुष होता है तो दूसरी निगाह उसका निर्धारक स्त्री को मानती है। उचित और अनुचित, न्याय और अन्याय, विवेकपूर्ण और अविवेकपूर्ण, स्वाधीनता और उच्छृंखलता, दायित्व और दायित्वहीनता, शालीनता और अश्लीलता के मध्य के धुँधलके को साफ करना होगा। समाज में सरोकारों का रहना भी उतना ही आवश्यक है जितना कि किसी भी स्त्री–पुरुष का। सामाजिकता के निर्वहन में स्त्री–पुरुष को समान रूप से सहभागी बनना होगा और इसके लिए स्त्री पुरुष को अपना प्रतिद्वंद्वी नहीं समझे और पुरुष भी स्त्री को एक देह नहीं, स्त्री रूप में एक इंसान स्वीकार करे। स्त्री की आजादी और खुले आकाश में उड़ान की शर्त उत्पादन में उसकी भूमिका हो। स्त्री की असली आजादी तभी होगी जब उसके दिमाग की स्वीकार्यता हो, न कि केवल उसकी देह की। अन्ततः कहीं ऐसा न हो कि स्त्री स्वतन्त्रता और स्वाधीनता का पर्व सशक्तिकरण की अवधारणा पर खड़ा होने के पूर्व ही विनष्ट होने लगे और आने वाली पीढ़ी फिर वही सदियों पुराना प्रश्न दोहरा दे कि 'मैं कौन हूँ ?'

वर्तमान समय में सरकार द्वारा महिलाओं के उत्थान के लिए अनेक कार्यक्रम एवं योजनाओं का संचालन तो की जा रहीं हैं लेकिन इन योजनाओं का क्रियान्वयन निचले स्तर तक उचित ढंग से न पहुँच सकने के कारण स्त्रियों को अपेक्षित लाभ नहीं मिल पा रहा है। स्त्रियों की स्थिति में काफी बदलाव आए हैं, लेकिन फिर भी वह अनेक स्थानों पर पुरुष–प्रधान मानसिकता से पीड़ित हो रही है। आज भी स्त्री स्वतंत्र सामाजिक पहचान के मामले में परिवार के बंधनों से मुक्त नहीं हुई है एक व्यक्ति के रुप में अपने स्वतंत्र निर्णय नहीं लिये जाने के लिये बाध्य की जाती है सामाजिक संबंधों के निर्धारण में पारिवारिक दबावों का सामना कर रही है। इस सन्दर्भ में युगनायक एवं राष्ट्रनिर्माता स्वामी विवेकानन्द का यह कथन उल्लेखनीय है– ''किसी भी राष्ट्र की प्रगति का सर्वोत्तम थर्मामीटर है, वहाँ की महिलाओं की स्थिति। हमें नारियों को ऐसी स्थिति में पहुँचा देना चाहिए, जहाँ वे अपनी समस्याओं को अपने ढंग से स्वयं सुलझा सकें। हमें नारीशक्ति के उद्धारक नहीं, वरन् उनके सेवक और सहायक बनना चाहिए। भारतीय नारियाँ संसार की अन्य किन्हीं भी नारियों की भाँति अपनी समस्याओं को सुलझाने की क्षमता रखती हैं। आवश्यकता है उन्हें उपयुक्त अवसर देने की। इसी आधार पर भारत के उज्ज्वल भविष्य की संभावनाएँ सन्निहित हैं।''

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. डॉ. अर्जुन च्व्हाण, विमर्श के विविध आयाम, वाणी प्रकाशन, दिल्ली–110002, सं.2008 पृ.सं. 29–30।
2. मनुस्मृति, 3.56।
3. सिंह करण बहादुर मार्च (2006),महिला अधिकार व सशक्तिकरण ,कुरूक्षेत्र।
4. सुरेश लाल श्रीवास्तव मार्च (2007), राष्ट्रीय महिला आयोग, कुरूक्षेत्र।
5. रॉस,मार्क., ''फीमेल पॉलीटिकल पार्टिसिपेशन,'' अमेरिकन एन्थ्रोपॉलॉजिस्ट, 1986, पृ. 224.
6. गौतम हरेन्द्र राज मार्च (2006),महिला अधिकार संरक्षण , कुरूक्षेत्र।
7. व्यास, जय प्रकाश (2003), नारी शोषण , ज्ञानदा प्रकाशन।
8. शर्मा, सी.एल. अरबन कम्युनिटीज पॉवर स्ट्रक्चर, शिवा पब्लिकेशन्स, उदयपुर।
9. शैलजा नागेन्द्र (2006) , वोमेन्स राइट्स , ए डी वी पब्लिशर्स जयपुर।
10. आहुजा, राम (1999) भारतीय सामाजिक व्यवस्था, रावत प्रकाशन जयपुर, नई दिल्ली।
11. हसनैन, नदीम (2004) समकालीन भारतीय समाज, भारत बुक सेन्टर, लखनऊ।
12. संडे, पेग्गी., ''फीमेल स्टेटस इन द पब्लिक डोमेंन'' स्टेनफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, स्टेनफोर्ड,1974
13. जोशी, पुष्पा (1988) गांधी आन वोमन, सेन्टर फार वोमन'स डेवलपमेन्ट स्टडीज, दिल्ली।
14. मिश्र, जयशंकर (2006) प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना।
15. श्रीनिवास, एम0एन0 (1978) द चेन्जिग पोजीशन ऑफ इण्डिया वूमन, आक्सफोर्ड, यूनिवर्सिटी प्रेस, बाम्बे।
16. राजनारायण डॉ0,स्त्री विमर्श और सामाजिक आन्दोलन।